ओ३म्

संसार के कल्याण में 'न' कहने की भूमिका

✍ आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

बुद्धि, मन एवं इन्द्रियों का समुदाय आत्मा का एक ऐसा साधन है, जो इस शरीर को आत्मा से जोड़ता है। शरीर रथ है, आत्मा रथी, बुद्धि सारथी, मन लगाम तथा इन्द्रियाँ घोड़े हैं, यह उपनिषत्कार का कथन है। यह रथ अपने रथी को गन्तव्य तक तभी सकुशल पहुँचा सकता है, जब रथी आत्मा का अपने सारथी बुद्धि पर नियन्त्रण हो, मन रूपी लगाम सारथी बुद्धि के द्वारा नियन्त्रित होवे और इन्द्रिय रूपी घोड़े नियत मनरूपी लगाम से सदैव नियन्त्रित रहें। संसार के विभिन्न आकर्षक मार्ग हैं। ये मार्ग बहुरंगी एवं आकर्षक हैं। इनके आकर्षण से इन्द्रियों रूपी घोड़े इधर-उधर मार्गों के आकर्षण से प्रभावित होकर स्वच्छन्द विचरण करने की प्रतिक्षण माँग करते हैं अर्थात् चाहते हैं, परन्तु लगाम के द्वारा सारथी उनकी हर माँग को नकारता रहता है। हमारे शरीर को दस घोड़े खींचते हैं। प्रत्येक घोड़े की पृथक्-पृथक् इच्छाएँ रहती है और सबकी इच्छाएँ प्रतिक्षण बदलती भी रहती हैं।

जरा कल्पना करें कि यदि सारथी प्रत्येक घोड़े की प्रत्येक इच्छा को पूर्ण करना चाहे, तब क्या वह रथ चल सकेगा? क्या उसका रथ, वह सारथी स्वयं व उसका स्वामी रथी सुरक्षित भी रह पायेगा? कदापि नहीं। यह इन्द्रियों की इच्छा को नकारने की शक्ति का ही परिणाम है कि आत्मा अपने मार्ग से भटकता नहीं और शरीर व मन भी स्वस्थ रह पाते हैं।

आज हम सभी आत्मनिरीक्षण करें कि क्या हमने कभी अपनी चंचल इन्द्रियों को 'न' कहना सीखा है? रसना की चंचलता को अनुभव करके क्या हमने उसकी इच्छा को कभी नकारने का प्रयास किया है? श्रवणेन्द्रियों, त्वक् इन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय, जननेन्द्रिय आदि किसी की स्वच्छन्दता को हम कभी 'न' कहने का साहस करने का प्रयत्न भी करते हैं अथवा इनकी हर स्वच्छन्दता को स्वीकार करते हुए हम इनके दास मात्र बनकर रह गये हैं? हम शरीर के राजा होकर भी अपनी सेविका इन्द्रियों को अपनी स्वामिनी बनाकर स्वयं उनके दास बनकार निरीह जीवन जी रहे हैं। जैसे निरीह पशु विवश होकर अपने स्वामी के प्रत्येक आदेश मानने के लिए विवश रहता है, वैसे ही क्या हम अपनी ही इन्द्रियों के सम्मुख निरीह व विवश पशु मात्र बनकर रह गये हैं?

आज संसार में रसना और जनन, इन दो इन्द्रियों ने मानवता को अपना बन्धक बना रखा है और बन्धक ही नहीं, अपितु इन्होंने मानवता की हत्या ही कर दी है। धन आदि साधनों की कभी न मिटने वाली भूख ने विश्व की अधिकांश सम्पदा को मात्र कुछ पूँजीपतियों के हाथों में सौंप दिया है। इन पूँजीपतियों ने अरबों भूखे-नंगे निरीह मानवों के भाग्यों को अपनी मुट्ठी में दबा रखा है। यदि इन पूँजीपतियों में इतना साहस आ जाये कि वे अपनी इन्द्रियों की वासनाओं को 'न' कह सकें, तो विश्व में दु:ख व दरिद्रता का चिह्न भी न मिले। कहीं अशान्ति, हिंसा, राग, द्वेष व वैमनस्य का साम्राज्य नहीं होगा। कहीं कोई अपराध नहीं होगा, बल्कि सर्वत्र शान्ति, मैत्रीभाव व प्रेम का प्रकाश होगा।

यह तो हुआ अपनी इन्द्रियों को 'न' कहने का परिणाम। अब जरा समाज में किसी अधर्मात्मा, जो भले ही कितना ही बलवान् क्यों न हो, को

'न' कहने पर भी विचार करें। आज बाहुबल, धन, पद व प्रतिष्ठा से सम्पन्न व्यक्ति किसी भी दुर्बल व्यक्ति से कोई भी अनुचित काम करा लेता है। दुर्बल वा निर्धन व्यक्ति का यह सामर्थ्य ही नहीं कि किसी सबल वा धनवान् व्यक्ति को कभी 'न' कह सके। इस कारण संसार में दुर्बल व धनहीन व्यक्ति का जीवन दासत्व से अभिशप्त दिखाई देता है, उन अभिशप्त जनों के मन से निकलने वाली दु:ख व शोक की तरंगें समूचे ब्रह्माण्ड को दुष्प्रभावित कर रही हैं। उधर सबल व धनी व्यक्तियों के मन से निकलने वाली लोभ, क्रोध व अहंकार की तरंगें भी ब्रह्माण्ड को प्रदूषित कर रहीं हैं और इस प्रदूषण से गम्भीर प्राकृतिक प्रकोप उत्पन्न हो रहे हैं। यदि निर्धन व निर्बल व्यक्ति अपने दृढ़ धर्मभाव से आत्म-बल अर्जित करके धनी व सबलों के अन्याय व शोषण को 'न' कहने का साहस जुटा लें, तब वे अन्यायी लोग स्वयं सुधार जायेंगे और ब्रह्माण्ड का सन्तुलन ठीक हो जायेगा।

इसलिये प्रत्येक मानव का यह स्वाभाविक धर्म है कि वह प्रत्येक असत्य, अन्याय, अहिंसा व शोषण भरे विचारों एवं व्यक्तियों को 'न' कहने का साहस करे। अपनी चंचल इन्द्रियों की चंचलता को 'न' कहने का साहस करे, तभी वह मनुष्य कहलाने का अधिकारी है, तभी वह परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ सन्तान कहलाने का अधिकारी है, अन्यथा उससे तो पशु ही श्रेष्ठ है, जो भले ही अपने स्वामी का दास हो, परन्तु इन्द्रियों का दास तो नहीं होता। इन्द्रियों व अन्यायी जनों के अतिरिक्त हम अपने मित्र वा सम्बन्धी जनों के अनुचित आग्रह वा परामर्श को भी मोहवश वा लोभवश नहीं नकार पाते और जीवन में अनेक पापों को जन्म देने लगते हैं। यहाँ भी 'न' कहना हमें इन पापों से बचा सकता है।

इसलिऐ आइये! अन्याय, अधर्म, अत्याचार व कुविचार को 'न' कहना सीखकर आत्मबल बढ़ाएँ और संसार को स्वर्ग बनाएँ। यही ऋषियों व वेदों का सन्देश है, आदेश है।

–आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

/vaidicphysics www.vaidicphysics.org